अशोक की कहानी

कृष्ण कुमार

अशोक पढ़ना चाहता था। उसके परिवार में कभी कोई स्कूल नहीं गया था। पिता ज़मीन के छोटे-से टुकड़े पर खेती करते थे, अनपढ़ थे। अशोक ने कई बार ज़िद की, माँ को समझाया और अन्त में पिता मान गए कि उसे पास के कस्बे के प्राइमरी स्कूल में भर्ती करा देंगे।

पहले दर्जे में हिन्दी के अन्तर्गत अध्यापक ने वर्णमाला सिखाई। एक-एक अक्षर की आवाज़ हफ्तों तक रटाई, अक्षरों की आकृति बनाना सिखाया। जिन बच्चों को दिक्कत आती थी, उनका हाथ पकड़कर सिखाया। स्कूल में एक छोटा-सा ब्लैकबोर्ड था - खूब घिसा हुआ, चॉक के बारीक कणों से इस कदर ढका हुआ कि लिखाई देखने के लिए सिर की नसों का सारा ज़ोर पुतली पर केन्द्रित करना होता था। यह ब्लैकबोर्ड अगस्त से अक्टूबर तक वर्णमाला की आकृतियों से ढका रहा। बच्चे एक-एक अक्षर की आकृति बीसियों बार उतारते। इस तरह अन्त में अशोक ने सारी हिन्दी वर्णमाला सीख ली।

एक अध्यापिका ने पाठ्यपुस्तक की तरफ ध्यान दिलाया जिसमें हर अक्षर के पास एक शब्द लिखा था और एक चित्र बना था। 'क' के पास लिखा था 'कबूतर'। अशोक शुरू से जानता था कि 'क' का मतलब होता है 'कबूतर'। इसलिए जब बहनजी ने अक्षर जोड़कर 'कबूतर' पढ़ना सिखाना चाहा तो अशोक बहुत खुश हुआ। पर उसे यह नहीं समझ में आया कि दरअसल, बहनजी के लिए

'क', 'बू', 'त' और 'र' का कुल योग 'कबूतर' है। अशोक के दृष्टिकोण से 'क' 'कबूतर' था। बहनजी के पास इतना समय नहीं था कि अशोक का दृष्टिकोण समझें। 'अशोक का भी कोई दृष्टिकोण है' - यह बात वे जानती थीं या नहीं, मैं कह नहीं सकता। बहरहाल, उन्होंने सोचा कि अशोक 'क' के साथ लिखे शब्द को देखकर 'कबूतर' कह रहा है यानी वह पढ़ना सीखने लगा है।

इसी तरह अशोक ने बाकी सब अक्षरों के साथ लिखे शब्दों को पढ़ना सीख लिया। अक्षरों की आकृतियाँ स्लेट और कॉपी पर उतारना तो वह पहले से ही सीख चुका था। पहले दर्जे का अन्त होते-होते वह अपनी प्रगति से काफी खुश था। जब वह दूसरी में आया और कक्षा में उससे किताब पढ़ने को कहा गया तो वह इस तरह बोला-

"'कबूतर' का 'क', 'मटर' का 'म', 'लंगूर' का 'ल', क-म-ला" हर बार उसे इस तरह पढ़ते देखकर अध्यापिका कुछ नाराज़ हुईं। अशोक के हर प्रयास के बाद अध्यापिका उससे कहतीं, "दूसरे बच्चों को ध्यान-से सुनो, उनकी तरह पढ़ो।" अशोक दूसरे बच्चों को बहुत ध्यान-से सुनता था पर यह समझने में असमर्थ रहता कि वह कहाँ गलती कर रहा है। उसे लगता कि दूसरे ठीक उसकी तरह पढ़ रहे हैं। यही शब्द वे पढ़कर सुना रहे हैं। फिर बहनजी उससे क्यों नाराज़ हैं? सौभाग्यवश बहनजी और भी कुछ बच्चों पर खीझती थीं, इसलिए अशोक अपने को एकदम अकेला नहीं पाता था। किसी तरह उसने दूसरी कक्षा के सारे दिन काट लिए। धीरे-धीरे उसकी 'क' से 'कबूतर' कहने की आदत भी कम हो गई। अब वह इस तरह पढ़ता था-

'ग' पे 'उ' की मात्रा 'गु'

'ल' पे 'आ' की मात्रा 'ला'

'ब'

'क' पे 'आ' की मात्रा 'का'

'फ' पे बड़े 'ऊ' की मात्रा 'फू'

'ल'

गु-ला-ब का फू-ल

बहनजी उसे कभी-कभार ही पढ़ने को कहतीं, अक्सर उनके पास की टाटपट्टी पर बैठे बच्चे ही पूरा पाठ पढ़ देते। पर अशोक इस बात से उदास नहीं था। उसने एक पूरी कविता याद कर ली थी। दूसरी कक्षा के अन्तिम दिनों में जब किताब दोहराते वक्त इस कविता को पढ़ने का नम्बर आया तो अशोक ने बगैर सही पेज खोले पूरी कविता पढ़कर सुना दी। बहनजी उससे गुस्सा थीं कि उसने सही पेज क्यों नहीं खोला। अशोक खुश था कि वह बिना किताब देखे पढ़ने लगा है। उसके और बहनजी के दृष्टिकोणों का विरोध तीखा होता जा रहा था।

आखिरकार, तीसरी कक्षा शुरू

हुई। अशोक के गाँव के कई बच्चे स्कूल आना छोड़ चुके थे। उस पर भी दबाव पड़ा, पर वह अड़ा रहा। वह चाहता था कि जल्दी-जल्दी स्कूल खत्म करके पैसे कमाए। बहनजी कई बार कक्षा में बता चुकी थीं कि जो बच्चे स्कूल में आगे बढ़ते रहेंगे, वे खूब बड़े आदमी बनेंगे और पैसे कमाएँगे।

पर तीसरी कक्षा की शुरुआत से ही विघ्न पड़ने लगे। 'भूगोल' नाम का एक नया विषय शुरू हुआ। अशोक को भूगोल की किताब में कुछ पल्ले नहीं पड़ा। पहले पेज पर लिखा था, 'हमारा ज़िला ऊबड़-खाबड़ और पथरीला है। ...यह कर्क रेखा से कुछ ऊपर स्थित है। ...इसकी भू-रचना पठारी प्रकार की है।' कक्षा के कई बच्चे यह फर्राटे से पढ़ना सीख चुके थे। वे खड़े होकर पढ़ते, फिर कॉपी में उतारते। अशोक धीरे-धीरे पढ़ने की कोशिश करता तो बहनजी अधीर हो उठतीं। यही हालत एक और नए विषय 'विज्ञान' की घण्टी में हुई। महीने भर में बहनजी अशोक से इतना परेशान हो गईं कि उन्होंने उससे कुछ भी कहना छोड़ दिया। उनकी अधीरता और नाराज़गी का धागा, जिससे अशोक अभी तक बँधा था, उदासीनता में बदल गया। अशोक को लगा कि बहनजी को अब उससे कोई मतलब नहीं है। दिवाली की छुट्टी के बाद वह वापस स्कूल नहीं गया।

***

कुछ वर्ष बाद ज़िले में एक सर्वेक्षण हुआ। प्रान्तीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद की ओर से दो सर्वेक्षक लम्बे-लम्बे फॉर्म लेकर आए। सर्वेक्षण का उद्देश्य यह पता लगाना था कि प्राथमिक शिक्षा में 'ड्रॉप-आउट' का दर इतना ऊँचा क्यों है। सर्वेक्षकों ने कई गाँव चुने और वहाँ जाकर माता-पिताओं के इंटरव्यू लिए। इस तरह स्कूल छोड़ने वाले सैकड़ों बच्चों के आँकड़े उनके शैक्षिक अनुसंधान की पकड़ में आ गए।

शिक्षा का कोई सर्वेक्षण हो रहा है, यह मुझे मालूम था। जब मुझे सर्वेक्षण का ठीक-ठीक उद्देश्य मालूम हुआ तो मैं आलस त्यागकर, अपना कौतूहल लिए सर्वेक्षकों से मिलने जा पहुँचा। उनका काम पूरा हो चुका था और वे जाने की जल्दी में थे। मैंने आग्रह किया कि वे मुझे अशोक की 'डेटा-शीट' दिखा दें। मैं यह जानने को बेहद उत्सुक था कि देश के आँकड़ों में अशोक का 'केस' किस तरह प्रस्तुत होगा। सैकड़ों बच्चों के पिताओं की 'डेटा-शीटों' में से एक को ढूँढ़ निकालने में सर्वेक्षक-बन्धु आनाकानी कर रहे थे। मैंने बातचीत के दौरान अपनी हैसियत और डिग्री का ज़िक्र किया तो वे तैयार हो गए। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते जब अशोक के पिता की 'डेटा-शीट' मिली तो उसे पढ़कर यह साफ निष्कर्ष निकलता था कि अशोक ने अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के सन्दर्भ में, अपने पिता का हाथ बँटाने के लिए पढ़ना छोड़ा। सर्वेक्षण के समूचे विश्लेषण में अशोक की गणना 'परिवार की आर्थिक स्थिति' से प्रभावित 'ड्रॉप-आउट' बच्चों में की गई। अशोक एक ग्रामीण बाल श्रमिक घोषित हुआ।

मेरी आँखों में आँसू देखकर सर्वेक्षक-बन्धु कुछ घबरा गए। वे बोले, "क्या यह बच्चा आपके रिश्ते में आता है?" मैंने कहा, "नहीं, पर मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे लगता है कि आप उसका केस ठीक से समझ नहीं पाए हैं।" सर्वेक्षक ने कहा, "अब एक-एक केस को कहाँ तक समझा जाए।" फिर कुछ बात बदलकर वे बोले, "आप तो दिल्ली में रहते हैं, नई शिक्षा नीति कब से लागू होने वाली है?"

कृष्ण कुमार: प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं लेखक। शिक्षा के मुद्दों पर सतत चिन्तन एवं लेखन। दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा के प्रोफेसर और एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक रह चुके हैं। भारत और पाकिस्तान में शिक्षा पर उनकी दो पुस्तकें, *मेरा देश तुम्हारा देश* और *शान्ति का समर* चर्चित रही हैं। उनकी हाल की पुस्तकों में *शिक्षा और ज्ञान*, *चूड़ी बाज़ार में लड़की* और बच्चों के लिए *पूड़ियों की गठरी* शामिल हैं।

सभी चित्र: उबिता लीला उन्नी: डिज़ाइनर व चित्रकार हैं। इन्हें बच्चों और बच्चों की कहानियों के साथ काम करना बहुत पसन्द है। कुछ महीने *एकलव्य* के डिज़ाइन समूह के साथ फैलोशिप के तहत काम किया है।

यह लेख सन् 2008 में एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित पुस्तक *पढ़ने की दहलीज़* से लिया गया है। सम्पादक - लता पाण्डे।